“ज़रा सोचो!” रामू मन ही मन कहता।
“मुझे उस साइकिल पर बैठे हुए!

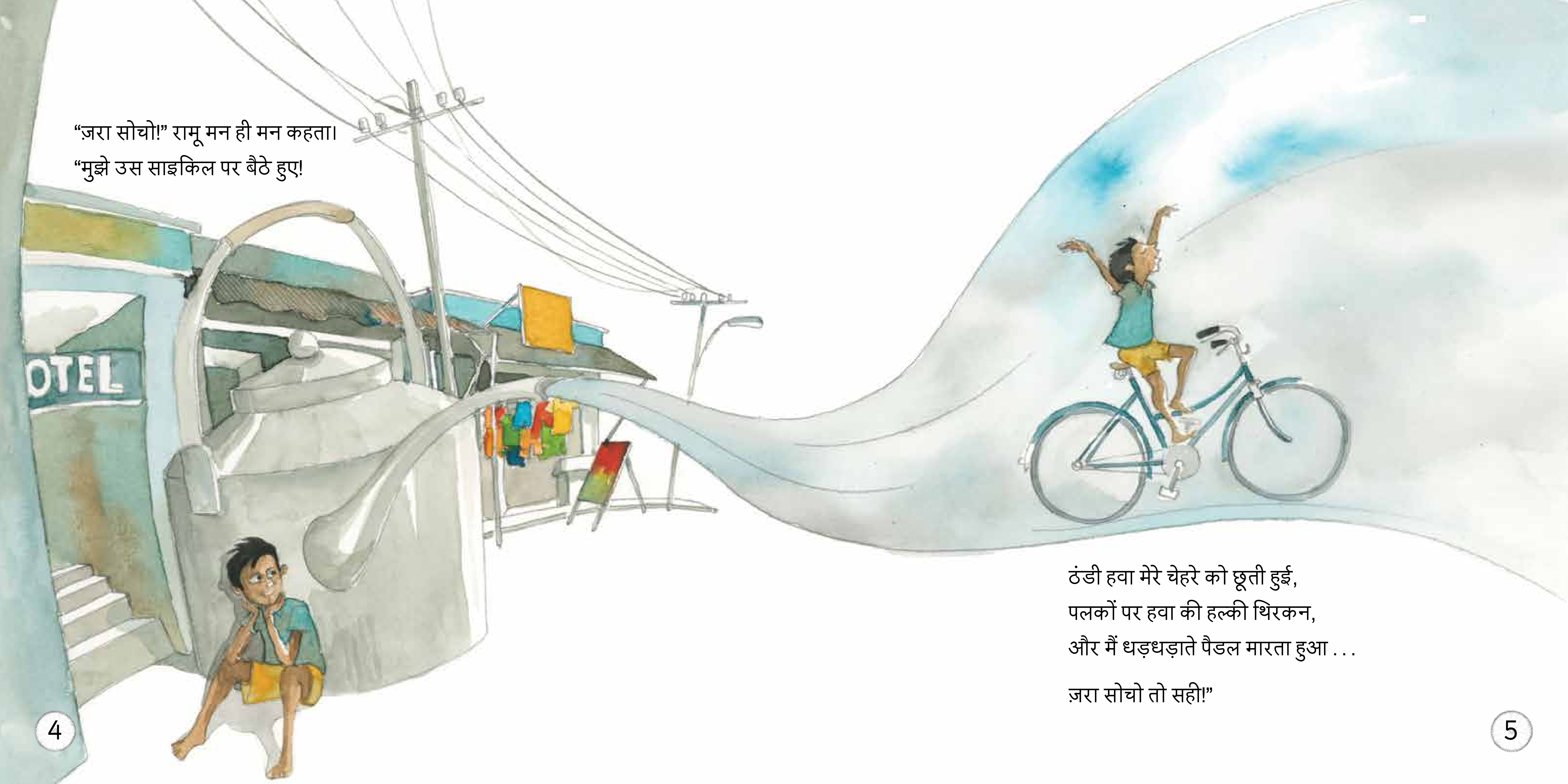

ठंडी हवा मेरे चेहरे को छूती हुई,
पलकों पर हवा की हल्की थिरकन,
और मैं धड़धड़ाते पैडल मारता हुआ . . .

ज़रा सोचो तो सही!”

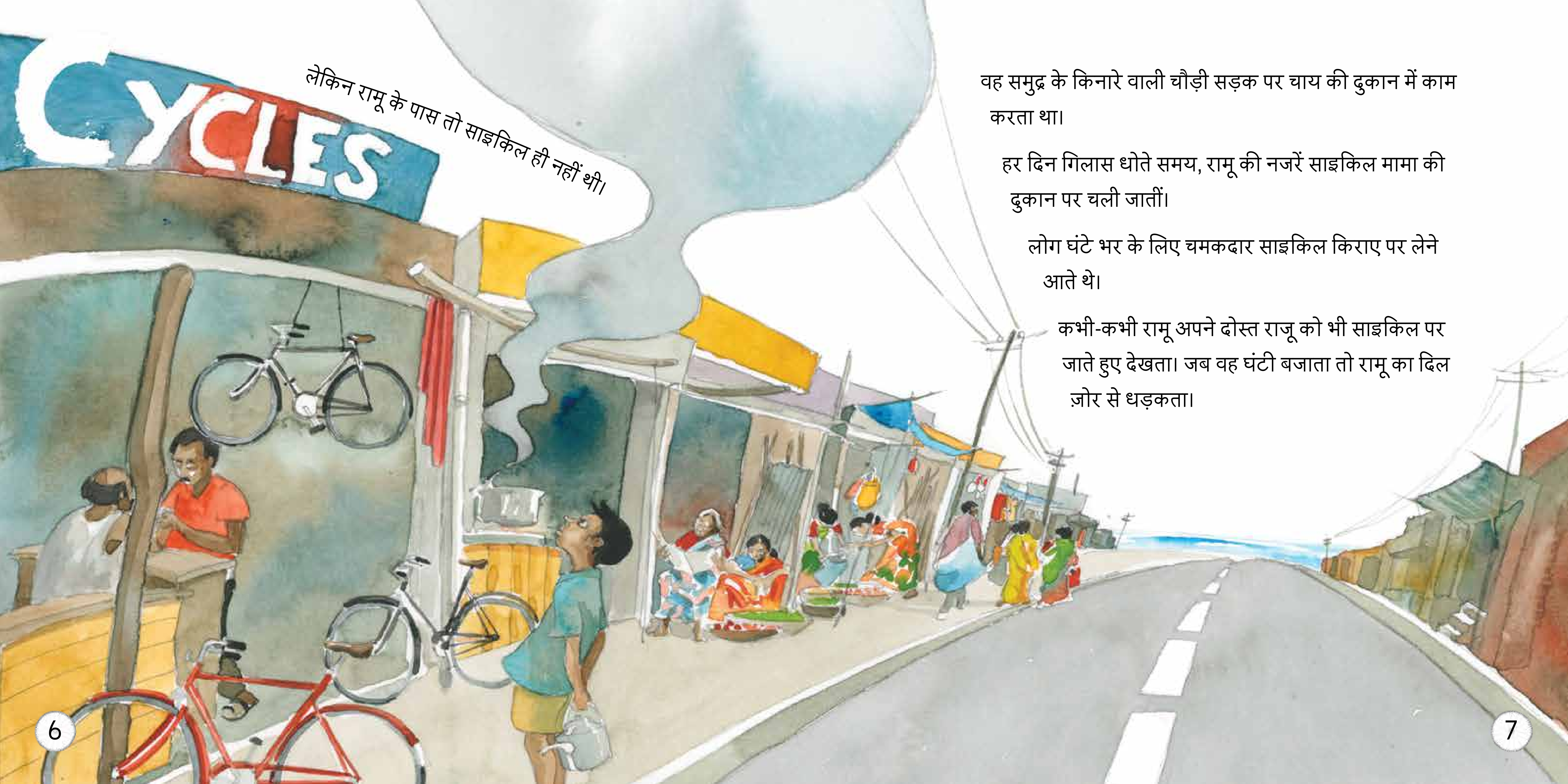

लेकिन रामू के पास तो साइकिल ही नहीं थी।

वह समुद्र के किनारे वाली चौड़ी सड़क पर चाय की दुकान में काम करता था।

हर दिन गिलास धोते समय, रामू की नजरें साइकिल मामा की दुकान पर चली जातीं।

लोग घंटे भर के लिए चमकदार साइकिल किराए पर लेने आते थे।

कभी-कभी रामू अपने दोस्त राजू को भी साइकिल पर जाते हुए देखता। जब वह घंटी बजाता तो रामू का दिल ज़ोर से धड़कता।

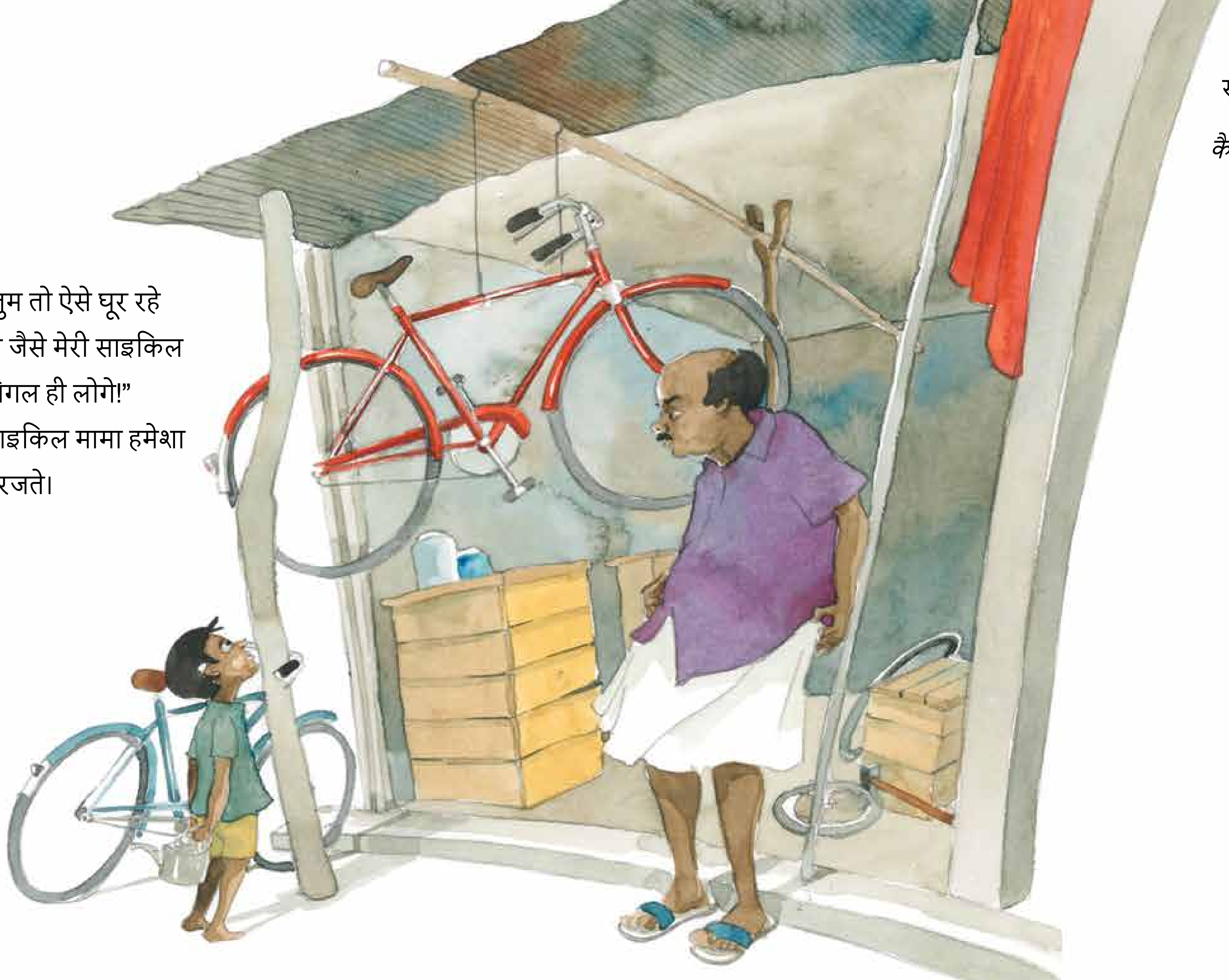

“तुम तो ऐसे घूर रहे
हो जैसे मेरी साइकिल
निगल ही लोगे!”
साइकिल मामा हमेशा
गरजते।

रामू शरमाते हुए मुस्कुराता।

कैसे पूछूँ? क्या देंगे मुझे? बस एक बार?

बड़ी, छोटी, एक पर कैरियर,

एक की हैंडल थोड़ी मुड़ी हुई,

एक पर ज़ंग लगी लाइट . . .

रामू की नज़रें एक साइकिल से
दूसरी साइकिल तक जातीं . . .

और उसकी पसंदीदा साइकिल, जिसकी गुलाबी टोकरी
पर पीले फूल बने हुए थे!

“अरे! अगली बार देखने के भी पैसे लूँगा!” साइकिल मामा कहते।

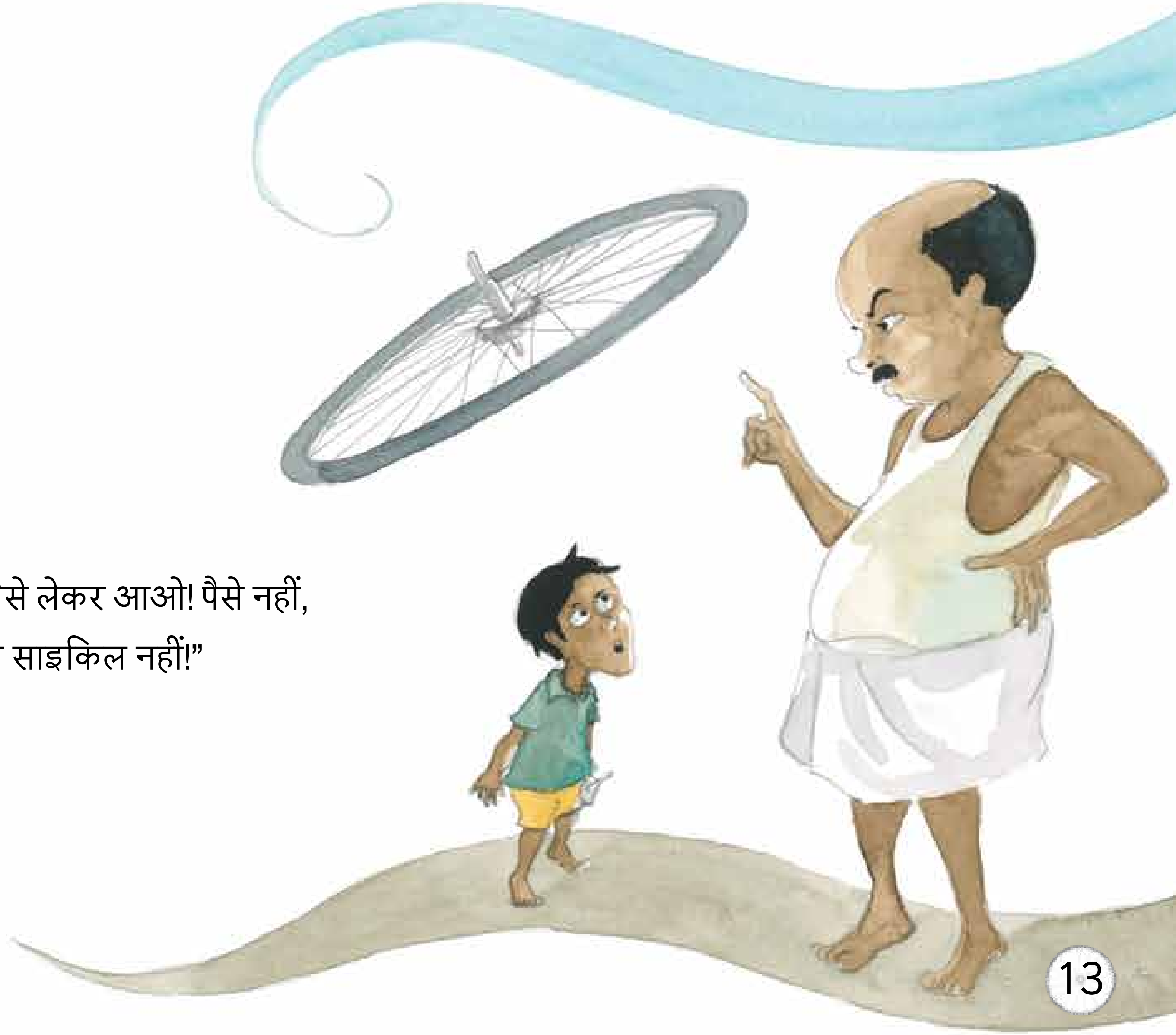

“पैसे लेकर आओ! पैसे नहीं,
तो साइकिल नहीं!”